ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

फ़िजी में भारतीय संस्कृति और हिन्दी साहित्य

- डॉ. बीरेन्द्र कुमार

सम्पूर्ण विश्व में प्रवास की प्रक्रिया प्राचीन काल से ही चल रही है। भारत से भी प्राचीन काल से ही हमारे पूर्वज विश्व के अनेक देशों में गए। इसी तरह विश्व के कई हिस्सों से विदेशियों का आगमन भारत में भी हुआ। प्राचीन भारत के इतिहास की बात करें तो शक, हूण आदि आक्रमणकारी के रूप में बाहर से भारत में आये और यहीं बस गये। एक मान्यता यह भी कहती है कि आर्य भी बाहर से ही आये थे। कालांतर में तुर्क, मुगल भी बाहर से ही आये और सैकड़ों वर्षों तक भारत की सत्ता के केंद्र में थे। परन्तु आज यदि भारत में शकों, हूणों के वंशजों की खोज की जाए तो ऐसा दावा करने वाले लोग नहीं मिलेंगे जो ये कहें कि वे शकों या हूणों के वंशज हैं और उनकी संस्कृति भारतीय संस्कृति से अलग है। तात्पर्य यह है कि इन आक्रमणकारियों का भारत में समायोजन हो गया है और आज इनकी कोई स्वतंत्र पहचान नहीं रह गई है। एक मिलीजुली संस्कृति के लोग भारत में बहुत पहले से ही रहते आये हैं। आज यहाँ हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि धर्मो को मानने वाले लोग रहते हैं और भारत का संविधान भी इन्हें बराबरी का हक़ देता है।

भारत में बाहर से आने वाले विदेशी आक्रमणकारी सैन्य शक्ति के बल पर हिंदुस्तान में वर्षों तक शासन किये और यहीं रच- बस गये। इसके विपरीत हिंदुस्तान से जो भी लोग विदेश गए उनमें से कोई आक्रमणकारी नहीं था। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो सबसे पहले बौद्ध धर्म को मानने वाले लोग भारत से बाहर गए और विश्व के अनेक देशों को सत्य,अहिंसा एवम् शांति का पाठ पढ़ाया। बौद्ध- काल से ही भारतीयों के श्रीलंका में जाने के प्रमाण मिलते हैं। आज श्रीलंका की आबादी का अधिकांश हिस्सा भारतीय मूल के लोगों का है। श्रीलंका के अलावा दक्षिण पूर्व एशिया के अन्य कई देशों में भी तभी से भारतीयों का प्रवास होता रहा। भारतीय

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

कभी भी आक्रमणकारी के रूप में किसी भी देश में नहीं गये थे बल्कि हिन्दुस्तान से बाहर जाने वाले इन भारतीयों का उद्देश्य पहले धर्म प्रचार और व्यापार था और आधुनिक काल में श्रम हो गया। कालान्तर में सेवा क्षेत्र के प्रभावी होने से इंजीनियर, डॉक्टर, विद्यार्थी आदि भी विदेश जाने लगे।

आधुनिक युग में भारतीयों का वैदेशिक प्रवास पहले गिरमिटिया मजदूर के रूप में हुआ। बिर्टिश, फ्रेंच, डच आदि उपनिवेशों में कृषि कार्य के लिए श्रमिकों की आवश्कता थी। इस आवश्कता की पूर्ति के लिए भारत से लाखों लोगों को एक करार (Agreement) के तहत विश्व के कई देशों में भेजा गया। इस करार के तहत जो भी लोग भारत से बाहर भेजे गए, वे सभी गिरमिटिया (एग्रीमेंट का बिगड़ा रूप) कहलाये। ये गिरमिटिया मजदूर जिस देश में भी गये उस देश की संस्कृति को प्रभावित किया और कई जगह स्वयं भी उस देश की संस्कृति से प्रभावित हुये। जहाँ एक ओर वेस्टइंडीज में गए हुए भारतीयों के वंशज हैं, जो आज भारतीय भाषा एवम् संस्कृति को पूरी तरह से भूल चुके हैं। उनके शरीर की बनावट या उनके नाम से ही जाना जा सकता है कि वे भारतीय मूल के हैं। त्रिनिदाद और टोबेगो की स्थिति के संदर्भ में नरेंद्र कोहली लिखते हैं- "नाक नक्शा सामान्य भारतीयों सा था। नाम भी कुछ विकारों के साथ भारतीय ही थे। स्वाभाविक था कि मैं उनसे हिंदी में संवाद करता। पर वे मेरी बात नहीं समझे। उन्होंने बड़ी शालीनता से बताया कि उनके दादा भोजपुरी या हिंदी बोला करते थे, अब उनके घरों में हिंदी नहीं बोली जाती। उनकी पीढ़ी तो फिर भी हिंदी के साथ दस- बीस शब्द समझ लेती है, किन्तु उनके बच्चे हिंदी एकदम नहीं समझते।"[i] वहीँ दूसरी तरफ फ़िजी, मारिसस, सूरीनाम जैसे अन्य देश भी हैं, जहाँ भारतीय संस्कृति अपने जीवंत रूप में दिखाई देती है। परन्तु इन देशों में रहने वाले भारतवंशियों को अपनी भारतीय संस्कृति बचाने के लिए अनेक संघर्ष करने पड़े। जिसका परिणाम यह हुआ कि ये देश आज सांस्कृतिक रूप से लघु भारत जैसे प्रतीत होते हैं।

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

फ़िजी भारत से लगभग 12 हज़ार किलोमीटर की दूरी पर प्रशांत महासागर में स्थित तीन सौ से अधिक द्वीप समूहों का एक देश है। यहाँ भारतवंशी लोग बड़ी संख्या में रहते हैं। फ़िजी में इनका इतिहास लगभग एक सौ इकतालीस साल पुराना है। 'लियोनिदास' नामक समुद्री जहाज से 468 भारतीय गिरमिटिया मजदूर कठिन समुद्री यात्रा करके 15 मई 1879 ई. को पहली बार फ़िजी पहुंचे। इसी क्रम में सन 1916 ई. तक लगभग 63 हज़ार गिरमिटिया मजदूर 5 वर्ष के करार पर फ़िजी ले जाए गए, जिनमें से अधिकांश वहीँ बस गए। कुछ ही भारत वापस आ पाये। महात्मागांधी, गोपाल कृष्ण गोखले, डॉ. मणिलाल, तोताराम सनाढ्य आदि लोगों के प्रयास से सन 1916 ई. में फ़िजी जाने वाले गिरमिटिया मजदूरों पर रोक लगा दिया गया। गिरमिट प्रथा की समाप्ति के बाद भी फ़िजी में भारतीयों का प्रवास होता रहा। परन्तु ये गिरमिटिया मजदूर नहीं थे। बल्कि बेहतर जीवन की आशा में स्वतंत्र रूप से फ़िजी जा रहे थे। फ़िजी में बढ़ती हुई भारतवंशियों की संख्या को देखकर फ़िजी सरकार ने सन 1931ई. में कानून बनाकर फ़िजी में भारतीयों के प्रवेश पर रोक लगा दी। बावजूद इसके एक समय ऐसा भी आया जब फ़िजी में भारतवंशियों की आबादी पूरी जनसंख्या की पचास प्रतिशत से भी अधिक हो गई थी।

शुरूआती दिनों में इन गिरमिटिया मजदूरों को फ़िजी में अनेक समस्यायों का सामना करना पड़ा। धोखाधड़ी करके उनकी भर्ती की जाती थी। डिपो पहुँचने के बाद से ही उनके साथ पशुवत अमानवीय व्यवहार किया जाता था। तीन महीने की रौरव- समुद्री यात्रा के बाद फ़िजी पहुँचने पर उनसे कई मुश्किल काम कराये जाते थे। फ़िजी में इन्हें बहुत दुःख एवम् कष्ट सहन करने पड़े। परन्तु धीरे- धीरे फ़िजी में भारतीयों की स्थिति में बदलाव आया। इस सन्दर्भ में तोताराम का कहना है कि "यह घोर आश्चर्य कि बात है कि जल्दी भारतीय आप्रवासी कुली अपना दुख-दर्द भूल गये और उन्होंने भारत के बाहर एक नया भारत बना लिया। उनके पास हनुमान चालीसा, रामचरितमानस, गीता, सत्य नारायण कथा, सूर्य पुराण, देवी भागवत, इंद्रजाल, महाभारत, दुर्गासप्तशती,आल्हा खंड, सारंगा सदावृज, वैताल पचीसी

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

आदि उपलब्ध थे। संभवतः उन्हें भी वे अपने साथ ही लेते आये थे। या फिर उन्होंने इन्हें भारत वर्ष से ही मँगा लिया था ...पुस्तकें आयीं तो तुलसीजी भी आयीं, ठाकुर जी भी आये, शंख- आचमनी- कटोरी भी, शंख-घंट भी।"[ii] तोताराम सनाढ्य जो गिरमिटिया मजदूर बनाकर धोखे से फ़िजी पहुंचा दिए गये थे, वहां उन्होंने गिरमिटिया मजदूरों की दुर्दशा को देखा और स्वयं भी अनेक दुःख एवम् कष्ट सहे। तोताराम सनाढ्य सन 1893 ई. में फ़िजी पहुँचे। वहां उन्हें भूतलेन नामक कोठी में रहने के लिए घर दिया गया था। जहाँ डर के कारण कोई नहीं रहता था। उन्हें लोगों ने बताया कि भूतलेन में भूत रहते हैं। 'भूतलेन की कथा' नामक किताब तोताराम का आत्म- संस्मरण है, जिसे उन्होंने भारत वापस लौटने पर बनारसी दास चतुर्वेदी को सुनाया था। तोताराम ने बताया कि वह फ़िजी में रात्रि के समय पांडव गीता का पाठ करते थे, जिसे सुनने के लिए स्वदेशी गिरमिटिया मजदूर भी आते थे। मजदूरों को विश्वास हो गया था कि गीता पाठ के कारण ही भूत वहां से भाग गया। तोताराम अपने इस संस्मरण में कहते हैं- "रविवार के दिन कुली लेन में कोई आल्हा गा रहा है, कोई रामायण पढ़ रहा है, कोई खजडी, इकतारे बजाकर भजन गा रहा है ।"[iii] गिरमिटिया मजदूरों की स्थिति को पंडित कमला प्रसाद मिश्र की कविता 'गिरमिट के समय' भी उजागर करती है। इस कविता का एक अंश द्रष्टव्य है-

कोई रामायण बांच रहा कोई लेकर सत्य नारायण आया
ख़ूब किया उसका सम्मान कोई अनजान जो आंगन आया
गिरमिट वालों के साथ था मौसम रंग जमा लिया जो मन आया
खून बहाये तो फागुन आया जो आंसू बहाये तो सावन आया
खून पसीना बहाकर भी ये सभी दुःख दर्द को भूल गए थे
किन्तु कभी अपमान हुआ तो ये धर्म ही के अनुकूल गए थे
माँ- बहनों की बचाने को इज्जत सैकड़ों फांसी पर झूल गए थे।[iv]

बावजूद इसके फ़िजी में भारतीय गिरमिटिया मज़दूरों को आरम्भ में अनेक सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। सुबह से शाम तक उन्हें कठोर श्रम

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

करने पड़ते थे। जिसके कारण उन्हें किसी तरह के सांस्कृतिक आयोजनों में भाग लेने का अवकाश ही नहीं मिलता था। इस सन्दर्भ में डॉ. शालिनी ने अपनी शोध पुस्तक में लिखा है- "1879 से 1920 के मध्य भारत से फ़िजी जाने वाले प्रवासी हिन्दू व मुसलमान भारतीय मजदूर अपने- अपने जिन परम्परावादी वैवाहिक व पारिवारिक मान्यताओं द्वारा संचालित होते थे, वे सभी कुली लाइनों के असामान्य जीवन पद्धति के दौरान विघटित हो गए थे। यदपि उनकी परम्पराओं तथा रीति- रिवाजों जैसे जन्मोत्सव, छट्ठी, मुंडन, बछड़े की बलि, जनेऊ, विवाह में काफी बदलाव आ गया था लेकिन इन परम्पराओं को जारी रखने के पीछे अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाये रखने की भावना कार्य कर रही थी।"[v]

शुचि गुप्ता के अनुसार "फ़िजी के इमिग्रेशन विभाग ने भारतीय विवाह पद्धति व संस्कार को समाप्त करने की पहल की। इस विभाग ने हिन्दू या मुस्लिम धर्म के अनुसार किये गये विवाह को अस्वीकृत कर दिया। प्रवासियों के नकुलाओं डिपो पहुँचने पर विवाह पंजीकृत किया जाता था और केवल वही विवाह मान्य होता था जो इमीग्रेशन विभाग के ऑफिस में की गई हो। कुछ शिलिंग देने पर शादी हो जाती थी। रजिस्ट्री कराने के लिए पांच शिलिंग देने पड़ते थे...न कोई विधि या संस्कार किये जाते थे और न बहुत से मनुष्यों की उपस्थिति में पारस्परिक प्रतिज्ञाएँ ही होती थी। इन शादियों को हिन्दुस्तानी लोग 'मेरिट' के नाम से पुकारते थे।'मेरिट' को छोडकर और किसी प्रकार का विवाह न्याययुक्त नहीं था। "[vi]

फ़िजी में न केवल विवाह संस्कार बदले बल्कि हिन्दू धर्म में प्रचलित 'अंत्येष्ठी- संस्कार' भी बदल गये। हिन्दू धर्म की मान्यताओं के अनुसार मृतक का दाह संस्कार होना चाहिए, जिसमें कई विधि– विधान सम्पन्न होते हैं। मृतक के दाह संस्कार का अधिकार फ़िजी के भारतवंशियों को पहले नहीं था। समुदी- यात्रा के समय यदि कोई व्यक्ति मर जाता था, चाहे वह हिन्दू हो या किसी भी धर्म को मानने वाला हो, उसे समुद्री जलचरों का निवाला बनने के लिए समुद्र में फेंक दिया जाता था। फ़िजी में रहते हुए यदि किसी भारतीय की मृत्यु हो जाती थी तो उसे जमीन में गाड़ने का चलन प्रचलित हो गया था। इस सन्दर्भ में तोताराम कहते हैं कि- "मृतक को तो

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

पृथ्वी की गोदी में गढ़ा (गड्ढा) खोदकर ज्यों का त्यों सौंप देते हैं कि हिलने- डुलने न पावे। और कोई घर का हुआ तो दस- पांच ब्राह्मण खवा दिए, पिंड छूट गया। कहीं- कहीं गरुण पुराण और दसगात्र (शोक वाले दिनों में शाम को लोग भजन और गीत गाते हैं) हो जाते हैं। सरकार की तरफ से कोई रोकटोक फूंकने(जलाने) की अब नहीं है, लेकिन अपनी लायकी न घट जाय, इससे बहुत लोग फूंकते नहीं। सूवा शहर में तो यह भी रीति भी है कि आदमी घर मरा कि चट बक्सा (ताबूत) आ गया और उसमें हिन्दू धर्म को बंद करके ले गए। मरे को गाड़ (दफन) दिया और फ़िजी की सनातन रीति से बहुत हुआ तो सीमेंट से पक्का बनवाकर पत्थर की पटिया पर नाम लिख दिया। साल में एक बार आसपास की घास काट दी और हिन्दू धर्म से छुट्टी पाई।"[vii]

वर्षों तक फ़िजी में भारतीयों के प्रवास और संख्या में अधिक होने के कारण फ़िजी में रहने वाले भारतवंशियों के जीवन में क्रमश: सुधार हुआ। परिणाम स्वरुप भारतीय संस्कृति ने भी फ़िजी में धर्म, साहित्य, जीवन शैली और भाषा के रूप में अपनी जड़ें जमाना शुरू किया। पांच वर्ष की करार को पूरा करने के बाद तोताराम जब स्वतंत्र हुए तब इन्होंने गिरमिटिया मजदूरों की दशा को सुधारने के लिए कई प्रयास किये। भारत वापस पहुँचने परउन्होंने फ़िजी के गिरमिटिया मजदूरों की अमानवीय स्थिति को उजागर करते हुए उसे बंद कराने का भी प्रयास किया। तोताराम फ़िजी में कुल 21 वर्ष तक रहे। इनके ही प्रयास से "सन 1902 ई. में फ़िजी के नबुआ जिले में रामलीला शुरू हुई। लगातार सात-आठ वर्ष तक आपने रामलीला का वहां प्रबंध किया था। यह रामलीला दो उद्देश्यों से कराई जाती थी। एक तो यह कि प्रवासी भारतवासियों के हृदय में अपने धर्म तथा उत्सवों पर श्रद्धा बनी रहे तथा शर्तबंदी भाई- बहनों के दुखों को जानने का अवसर मिले।"[viii] फ़िजी में होने वाली रामलीला के सन्दर्भ में तोताराम कहते हैं- "रामलीला कई जगह होती है और पन्द्रह दिन में समाप्त होती है। इस मेले के अवसर पर सबको छुट्टी मिलती थी, एक- दूसरे से भेंट भी लेते थे और अपने दुख- सुख कह सुन लेते थे। किसी- किसी जगह की रामलीला में जंगली (मूलवासी) अच्छी सहायता देते थे, और रावण की सेना में राक्षस भी

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

बनते थे। लेकिन कुछ दिनों से अब रामलीला करने वालों में शिथिलता- सी आ गई है। रामलीला में सब हिन्दू- मुसलमान चंदा देते और बराबर काम भी करते थे।"[ix] कालान्तर में फ़िजी में कई हिन्दू मंदिरों, गुरुद्वारों तथा मस्जिदों का निर्माण हुआ। इन धार्मिक स्थलों में पूजा पाठ, कीर्तन, सत्संग भी होने लगे। प्रवासी भारतीय अपने साथ जो धार्मिक ग्रन्थ ले गए थे, पहले उसे अपने कमरों में पढ़ते थे। धार्मिक स्थलों के निर्माण हो जाने के बाद विभिन्न अवसरों पर इन ग्रंथों के सामूहिक पाठ भी होने लगे।

फ़िजी में 'श्री रामायण महारानी' की जयकार से रामायण पाठ शुरू किया जाता है। उसे लाल तूल में बांधकर ऊँची जगह पर रखते हैं। न्यायालय में कोर्ट क्लर्क 'श्री रामायण महारानी' की शपथ भी दिलाता है। फ़िजी की कुली लाइनों में अयोध्यापुरी, लंकापुरी आदि स्थान हैं। जहाँ रामभक्त जनता रामलीला के कतिपय प्रसंगों का मंचन और गायन करती है।[x] फ़िजी में भारतीय संस्कृति के प्रतीक रामलीला, दीपावली, होली, रक्षा बंधन, आदि के साथ अन्य त्यौहार भी मनाये जाते हैं। गंगा की अनुभूति मन में धारण करने के लक्ष्य से 'कोरोगंगा' एक ऐसा स्थान है जो कि रेवा नदी के तट पर बसा है। फ़िजी में अनेक मंदिर हैं जहाँ राम, सीता, हनुमान, शंकर, पार्वती, विष्णु, गणेश, दुर्गा, राधा कृष्ण आदि की मनोरम मूर्तियाँ भी स्थापित हैं। प्रत्येक शनिवार और मंगलवार की शाम को भक्तों की अतिशय भीड़ उमड़ पड़ती है। जनता भजन– पूजन के समय अनिवार्य रूप से धोती कुरता पहनती है और स्त्रियाँ साड़ी।[xi]

फ़िजी में होने वाले त्योहारों की के बारे में तोताराम कहते हैं- "फ़िजी प्रवासी भाई दान, पुन्य, चन्दा आदि देने में बराबर दत्तचित्त रहते हैं। सूर्य पुराण, सत्य नारायण की कथा, भागवत आदि भी सुनते हैं और रामनौमी, जन्माष्टमी का व्रत और उत्सव भी करते हैं। होली कहीं- कहीं तो सभ्यता से मनाई जाती है। अधिकांश स्थानों में बड़ी बेशर्मी से होली का स्वागत होता है। सबसे भारी त्यौहार प्रवासी भाई मनाते हैं, उसका नाम क्रिसमसडे कहते हैं। "[xii]

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

जोगिन्द्र सिंह कंवल फ़िजी में हिंदी के बड़े रचनाकार हैं। उनके अनुसार "गिरमिट काल से ही फ़िजी के भारतीयों को बिरहा, सोहर, फगुआ, विवाह गीतों में रूचि रही है लेकिन बड़ी संतोषजनक बात यह है कि पिछले कुछ सालों से नई पीढ़ी में यह रूचि कम नहीं हुई। लोकगीतों की परम्परा एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को सौंपती आ रही है। इतना ही नहीं गिरमिट काल से लेकर आज तक इन पीढ़ियों ने सैकड़ों भजन लिखकर प्रकाशित भी करवा दिए हैं। विवाहगीत, चौताल, झूमर शैली में की गई रचनाएँ आज भी बड़े उत्साह से गाई जाती हैं। कुछ समय पहले विदेसिया बहुत ही लोकप्रिय हुआ ।...भारतीय फिल्मों के गानों के प्रभाव के बावजूद हमारे सैकड़ों नौजवान बड़ी श्रद्धा से धार्मिक गीत गाते रहते हैं। लगभग हर गाँव में रामायण मण्डली है। जब ये लोग इन मंडलियों की बैठकों में राम भजन गाते हैं तो गाँव का सारा वातावरण गूंजने लगता है । आज भी ग्रामवासी बड़े उत्साह से खंजड़ी, ढोलक, तम्बूरा और घनताल बजाते हैं। फगुआ के मौसम में चौताल और झूमर से ये लोग देहाती इलाकों में संगीत भर देते हैं। होली जैसा जब कोई त्यौहार आता है तो बड़ी ख़ुशी और उल्लास से गाते- नाचते हैं। [xiii]

जोगिन्द्र सिंह कंवल ने फ़िजी के भारतवंशियों के जीवन को केंद्र में रखकर 'सवेरा', 'धरती मेरी माता', ' करवट' और 'सात समुद्र पार' नामक उपन्यास लिखे हैं। 'सात समुद्र पार' उपन्यास में आज़ादी के बाद फ़िजी में रह रहे भारतवंशियों के जीवन में आये परिवर्तनों का जिक्र किया गया है। फिजीवासी गोपाल और भारत की निर्मला को केंद्र में रखकर यह उपन्यास लिखा गया है। गोपाल अध्ययन के लिए फ़िजी से चंडीगढ़ आता है। कॉलेज में उसकी मुलाकात निर्मला से होती है। वह निर्मला को फ़िजी के बारे में बताता है। फिर एक दिन फ़िजी के किसानों, गन्ने के खेतों और गाड़ियों की बात करते हुए वह निर्मला को प्रभावित करने के लिए उससे कहता है कि "उसके पास सौ बीघा जमीन है। मोटरकार है, एक ट्रैक्टर है दो मकान है।" निर्मला उसकी बातों में आ जाती है और उसके साथ विवाह करने के लिए फ़िजी चली जाती है। वहाँ उसे धोखा मिलता है। बात- बात पर उसे लांक्षित एवम् प्रताड़ित किया जाता है। वह अनेक विपरीत परिस्थितियों का वह सामना करती है। परन्तु उसकी समस्याएं बढती चली जाती हैं। विवश होकर एक दिन वह नदी में कूदकर आत्महत्या का प्रयास करती है। परन्तु किसी तरह बच जाती है। इस तरह यह उपन्यास प्रवासियों द्वारा भारत से बहला फुसलाकर, प्रलोभन देकर युवतियों

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

को विदेश ले जाकर उनके साथ किये जाने वाले धोखाधड़ी को उजागर करता है। वहीँ दूसरी तरफ इस उपन्यास में आज़ादी के बाद फ़िजी में रहने वाले भारतवंशियो के सांस्कृतिक जीवन का भी उल्लेख मिलता है। निर्मला जब गोपाल के घर पहुँचती है तो उसके स्वागत में कई गीत गाये जाते हैं। जिनमें से एक गीत द्रष्टव्य है-

बाजे नगारा के जोड़ी
आज घर दुल्हिन आई
जब राजा- दुल्हिन बगिया में आये
अम्बुआ में लागे टिकौना बाजे।
जब राजा- दुल्हिन अंगनुवा में आये
सखियाँ क्लस लिए थाली—बाजे।
जब राजा- दुल्हिन महलिया में आये
अम्मा ने आरती उतारी।[xiv]

दुल्हन के आगमन के समय यह स्वागत गीत फ़िजी में गाया जाता है । गीत के बोल सुनकर ऐसा लगता है कि जैसे यह भारत में होने वाली किसी शादी का बिम्ब हो। इसमें नगाड़ा बजाने का उल्लेख है। नगाड़ा भारतीय वाद्ययंत्र है, जिसका प्रयोग भारत में होने वाली शादियों में पहले खूब किया जाता था। आज भी कई अवसरों पर नगाड़े का प्रयोग वाद्ययंत्र के रूप में किया जाता है। इस उपन्यास में विवाह के समय पंडित की भूमिका, विदाई गीत, स्वागत गीत, नेग, दरवाजा छेंक, कोहबर, मुंह दिखाई, दही रस्म, चूड़ियाँ खेलने की रस्म, आदि वैवाहिक रस्मों का भी उल्लेख मिलता है। फ़िजी की महिलाएं परम्परागत भारतीय पहनावे ज्यादा पसंद करती हैं। गोपाल की माँ निर्मला से 'फिजिबात हिंदी' सीखने की बात कहती है। फ़िजी में रहने वाले भारतीय मूल के लोग आपस में 'फिजिबात' में ही बातचीत करते हैं। जबकि फ़िजी रेडियो से भारतीय मूल के लोगों के लिए जिन कार्यक्रमों का प्रसारण होता है, उसकी भाषा मानक हिंदी होती है। 'फिजिबात' भारत में बोली जाने वाली 'अवधी बोली' की तरह है। इसमें भोजपुरी, खड़ीबोली और काईबाती भाषा के शब्द भी मिल जाते हैं। फ़िजी के मूल वासी भी फिजिबात भाषा को समझते और बोलते हैं। गोपाल की माँ द्वारा फिजिबात हिंदी में बोली गई कुछ पंक्तियाँ हैं - " देख, बहू की

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

बातें। कोई दूसरा सुनी तो कौन ची समझी। शायद बहू के हम लोगन खाना नहीं देता। गाँव में हम लोग के ईह रकम बात करके नाक कटवाइयो।" "शीला इसके बोलो फिजिबात सीख ले। नहीं तो हिआं ईह घर में गुजारा नहीं होए पाई। ऐसन बात से हमार मूड़ नहीं खावे।" इस उपन्यास में फ़िजी के मंदिर, गुरुद्वारों, रामकृष्ण मिशन आश्रम, हरे रामा हरे कृष्णा, सनातन धर्म सभा आदि की गतिविधियों का भी उल्लेख किया गया है। भजन कीर्तन हिंदी में गाये जाते हैं। तो कई अवसरों पर संस्कृत के श्लोक भी सुनने को मिल जाते हैं। उपन्यास में रामनवमी के समय फ़िजी में आयोजित होने वाली रामलीला का भी प्रसंग है। इस दिन रामायण मण्डली श्री रामचरितमानस की चौपाइयां भी गाती हैं।

ब्रिज विलास लाल फ़िजी से निर्वासित आस्ट्रेलिया में इतिहास के प्रोफेसर हैं। फ़िजी में भारतवंशियों के बारे में इन्होंने कई शोध कार्य किये हैं। फिजिबात हिंदी में इन्होंने 'मारित' शीर्षक से एक बड़ी कहानी लिखी है। इस कहानी में फ़िजी के भारतवंशियों के बीच वैवाहिक संबधों को विषय बनाया गया है। भारत के गावों में आज भी जिस तरह से शादियाँ सम्पन्न होती हैं लगभग वैसी ही स्थिति इस कहानी में चित्रित की गई है। भोला और सुखराजी पति- पत्नी हैं। बीस वर्षीय देवा इनका पुत्र है। देवा की शादी के लिए ननका नामक व्यक्ति भोला और सुखराजी से चर्चा करता है। कल्लू और धनिया की पुत्री मुन्नी से देवा का विवाह निश्चित होता है। कहानी का एक अंश द्रष्टव्य है-" सादी बड़ा धूमधाम से भए। काफी नेओतारिन आइन। बरातियन के वास्ते तीन लौरी और दुइ टैक्सी हायर करा गए। उधर कल्लू भी कोई कमी नहीं करिस सेवा सतकार में। जुलुम- जुलुम नचनिया हाइर करिस, और रात में कव्वाली जमा। नगोना- पानी भी रात भर चला। रकम- रकम के खाना बनवाइस, कढ़ी- पूड़ी, कद्दू के तरकारी, इमली अउर टमाटर के चटनी। सब बरातियन के खाना मज़ा पकड़िस। फिर कब दूसर सादी हाइ।"[xv]

आज भी उत्तरप्रदेश और बिहार के गावों में संपन्न होने वाली शादियां कमोवेश ऐसी ही होती हैं। जहाँ शादी के पहले बारात में जाने के लिए परिचितों एवम् रिश्तेदारों को न्योता दिया जाता है। बारात में सैकड़ों-हजारों की संख्या में लोग बाराती के रूप में जाते हैं। कन्या पक्ष वाले इनके खाने- पीने के लिए भांति- भांति के व्यंजन बनवाते हैं। मनोरंजन के लिए रात भर नाच- गान चलता रहता है। शादी से पहले

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

होने वाले छेकनी, तेलवान, भातवान का भी जिक्र इस कहानी में किया गया है। आज भी भारत में विशेषकर उत्तरप्रदेश और बिहार के गावों में संपन्न होने वाली शादियों में ये सभी रस्म- रिवाज सम्पन्न होते हैं। फ़िजी में रह रहे भारतवंशी होली, दीपावली आदि हिन्दुस्तानी पर्व- त्यौहार बहुत धूमधाम से मनाते हैं। यहाँ हिन्दुओं की आबादी लाखों में है। इसलिए यहाँ हिन्दू धर्म से सम्बंधित अन्य कई पर्व- त्यौहार भी मनाए जाते हैं। जोगिन्द्र सिंह कंवल ने फ़िजी में होने वाले अनेक पर्व- त्योहारों पर भी कविताएँ लिखी हैं। उनकी दिवाली पर रची एक कविता है, जिसमें दिवाली पर्व में जलाये जाने वाले अनगिनत दीपकों से अंधकार को मिटाने की बात की गई है-

हर्ष उत्साह से भरे हैं, सब आंगन और घर द्वार
हँस रहा है हर चिराग, बन धरती का राजकुमार।
हार खाकर प्रकाश से, दूर दौड़ा अंधकार,
बेशुमार दीपों की कतारें, ले आई रंगीन बहार।
आज अनोखी चमक से झिलमिलाता सारा देश है,
हर दीप मेरे दोस्तों, देता हमे देता हमें सन्देश है।[xvi]

आज होली- दीपावली केवल भारत का ही त्यौहार नहीं रह गया है। विश्व के उन सभी देशों में होली– दीवाली धूमधाम से मनायी जाती है जहाँ भारतवंशी लोग रहते हैं, और आज भी वे अपने धर्म को नहीं भूले हैं। भारतवंशियों को हिन्दू धर्म से जोड़े रखने में ये पर्व- त्यौहार काफी सहायक सिद्ध हुए हैं। महावीर मित्र ने अपनी कविता 'दिवाली का आगमन' में फ़िजी में दीवाली के महत्व पर प्रकाश डाला है।

सब के लिए शुभ हो, कार्तिक अमावस्या की शाम
इन्तजार कर रहा मानव जगत परिवार के साथ
दीपमाला के स्वागत में दीया की थाली लेकर हाथ
श्रद्धा से पूजन करूँ कि चरणों में प्रणाम
सबके लिए शुभ हो, कार्तिक अमावस्या की शाम।[xvii]

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

कमला प्रसाद मिश्र फ़िजी हिंदी साहित्य के बड़े कवि हैं। इन्होंने भारत में रहकर कई वर्षों तक विद्या अध्ययन किया। यहाँ के अनुभव और फ़िजी में रह रहे भारतवंशियों के जीवन को केंद्र में रखकर इन्होंने अनेक कविताएँ रची हैं। उनकी कविता- संग्रह का नाम 'कमला प्रसाद मिश्र की काव्य- साधना' है, जिसमें उनकी कई कविताएँ संकलित हैं। जो भारतीय पर्व- त्योहारों पर केन्द्रित हैं। हिंदी पत्रकारिता के माध्यम से इन्होने फ़िजी में हिंदी भाषा के प्रचार- प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसके लिए इन्हें सन 1978 ई. में भारत सरकार ने विश्व हिंदी पुरस्कार से सम्मानित किया है। उनकी एक कविता 'जहाँ- जहाँ हैं भारतवासी' है। इसके माध्यम से कवि ने उन भारतीयों पर व्यंग्य किया है जो जाति, धर्म, क्षेत्र आदि के आधार पर अलगाव की राजनीति करते हैं। इस तरह यह कविता आज के भारतीयों की हकीकत को बयाँ करती है-

लेकर नाम धर्म का कोई द्वेष यहाँ फैलाता
कोई लेकर नाम प्रान्त का दल है अलग बनाता
कोई अपने धन के बल पर अपना पैर जमाता
कोई अपनी सभा बनाता लेकर अपनी भाषा
कोई मजदूरों को देता तरह- तरह की आशा
कोई यहाँ किसानों पर ही फेंक रहा है पासा
अपना दल है लोगों का अपना अपना ही मत है
अपना ढोल बजाना परनिंदा ही सब की लत है
जहाँ-जहाँ हैं भारतवासी वहां महाभारत है।[xviii]

फ़िजी में हिंदी भाषा बोलने वाले लोगों की अधिकता के कारण वहां के संविधान में हिंदी को भी राष्ट्र की भाषा का दर्जा दिया गया है। फ़िजी में हिंदी भाषा और संस्कृति के प्रसार के लिए कई धार्मिक संस्थाओं ने भी प्रयास किया है, जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा, सनातन धर्म प्रितिनिधि सभा आदि प्रमुख हैं। विदेश में रहने वाले भारतवंशियों के हिंदी भाषा के प्रति प्रेम एवम् लगाव के सन्दर्भ में धीरा वर्मा का कहना है कि- "विदेश में बसे भारतीयों के लिए हिंदी भारतीय अस्मिता का प्रतीक है और इसलिए हिंदी की सुरक्षा और प्रतिष्ठा के लिए विदेशों में बसे भारतीय सजग

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

और सचेष्ट हैं। वे परिवार में, सामाजिक उत्सवों में और भारतीय सभाओं और सम्मेलनों में हिंदी का प्रयोग कर अपनी भारतीय अस्मिता को बचाए रखना चाहते हैं।"[xix] प्रोफसर सुब्रमणी के पिता मलयालम भाषी थे, फ़िजी में उन्होंने हिंदी सीखा और कालांतर में उनका पूरा परिवार फ़िजीबात हिंदी में बातचीत करने लगा। अंग्रेजी के प्रोफेसर होते हुए भी प्रो. सुब्रमणी ने फ़िजी के भारतवंशियों के जीवन को आधार बनाकर फ़िजीबात हिंदी में 'डउका पुराण' नाम से एक वृहत उपन्यास लिखा है। इस उपन्यास के लिए उन्हें 2003 ई. के विश्व हिंदी सम्मेलन सूरीनाम में सम्मानित किया गया। फ़िजी में हिंदी भाषा के संदर्भ में प्रो. सुब्रमणी का कहना है कि -" इस समय फ़िजी की आबादी 8,23000 है, जिसमें से 3,55000 भारतीय हैं। जिन्हें हम 'इंडोफिजियंस' कहते हैं। वे सभी फ़िजी हिंदी (फिजिबात) बोलते हैं, जो एक मिश्रित भाषा है, और जो अवधी, भोजपुरी, ब्रज, हिन्दुस्तानी और कुछ अंग्रेजी तथा फ़िजी के आदवासियों की भाषा से मिलकर बनी है। कुछ आदिवासी भी यह भाषा जानते हैं लेकिन पूजापाठ, विद्यालय, रेडियो तथा समाचारों में मानक या शुद्ध हिंदी का ही प्रयोग किया जाता है। फ़िजी में दो प्रकार की हिंदी प्रयोग में लाई जाती है और विदेश में बसे 'इंडोफिजियंस' भी दोनों भाषाओँ को काम में लाते हैं।"[xx]

फ़िजी में हिंदी के सैकड़ों रचनाकार हैं, जिन्होंने हिंदी की कई विधाओं में रचनाएँ लिखी हैं। उनकी अधिकतर रचनाओं के मूल में फ़िजी में रहने वाले भारतवंशी लोग हैं। जहाँ एक तरफ उनकी रचनाओं में गिरमिट काल के भारतीय मजदूरों की अमानवीय स्थिति का चित्रण मिलता है, तो दूसरी तरफ आज़ादी के बाद फ़िजी में रहने वाले भारतीय मूल के लोगों में होने वाले परिवर्तनों का भी उल्लेख मिलता है। चूँकि फ़िजी के हिंदी साहित्य की मूल संवेदना प्रवास जनित समस्याओं से उपजी है। इसलिए इनकी रचनाओं में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारत भी उपस्थित हो जाता है। फ़िजी में रहने वाले पहली पीढ़ी के प्रवासी भारतीय जहाँ अपने छूट गए भारत को हमेशा याद करते थे और किसी दिन भारत वापस जाने का ख्बाब लिए कठिन परिश्रम कर रहे थे। कालांतर में इन्होंने अपनी मेहनत के बल पर फ़िजी में अपने को स्थापित किया तथा साथ में वहां भारतीय संस्कृति भी स्थापित हुई। खान- पान,

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

रहन- सहन, पूजा- पाठ, शादी- विवाह आदि की जो स्थिति भारत में है, कमोवेश वैसी ही स्थिति फ़िजी के भारतवंशियों में भी है। अगली पीढ़ी के भारतवंशियों की हालात और सुधरे । अब ये सिर्फ मजदूर ही नहीं रह गए बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में अपने को स्थापित किया है। कालान्तर में राजनीति- प्रशासन में भी उनकी भागेदारी बढ़ी । लोकतान्त्रिक राजनीतिक व्यवस्था के सर्वोच्च पद पर भी भारतीय मूल का व्यक्ति विराजमान हो चुका है ।

गिरमिट काल से ही फ़िजी में हिंदी साहित्य की रचनाएँ होती रही हैं। पहले भारत छूटने की पीड़ा और गिरमिट जीवन से उपजी समस्याएं उनकी रचनाओं के विषय होते थे। गिरमिट काल की समाप्ति के बाद फ़िजी का हिंदी साहित्य वैविध्य विषयमुखी होने लगा। एक तरफ फ़िजी और वहां के लोग उनकी रचनाओं के विषय बने दूसरी तरफ भारत और यहाँ के लोग भी उनकी रचनाओं में उपस्थित मिलते हैं। इस तरह फ़िजी के रचनाकारों ने न केवल हिंदी को वैश्विक स्वरूप दिया है बल्कि भारत से बहुत दूर एक लघु भारत को भी अपनी रचनाओं में साकार किया है।

---

[i] गगनांचल, अक्तूबर- दिसम्बर 2002, पृ.- 28
[ii] फ़िजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष, तोताराम सनाढ्य, रे माधव पब्लिकेशंस गाज़ियाबाद, पृ.-19
[iii] भूतलेन की कथा, सं, बृजलाल तथा योगेन्द्र यादव, सरस्वती प्रेस दरियागंज, नई दिल्ली , पृ.- 31
[iv] फ़िजी का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, स. विमलेश कांति वर्मा, साहित्य अकादेमी नई दिल्ली, पृ.- 85
[v] फ़िजी, डॉ. शालिनी, प्रकाशन संस्थान दरियागंज, नयी दिल्ली, पृ.-210
[vi] फ़िजी में प्रवासी भारतीय, डॉ. शुचि गुप्ता, हिंदी साहित्य निकेतन बिजनौर. पृ.- 84-85
[vii] भूतलेन की कथा, पृ.- 82-83
[viii] फ़िजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष, पृ.-126
[ix] भूतलेन की कथा, पृ.- 83-84
[x] सागरपार भारतीय संस्कृति और हिंदी, डॉ. कामता कमलेश, शिल्पायन, दिल्ली, पृ.-11
[xi] सागरपार भारतीय संस्कृति और हिंदी, पृ.- 56
[xii] भूतलेन की कथा, पृ.- 83

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 9 July 2020

[xiii] फ़िजी का साहित्य, सं. जोगिन्द्र सिंह कंवल, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, नई दिल्ली, 2004, पृ.-12-13
[xiv] सात समुद्र पार, जोगिन्द्र सिंह कंवल, हिंदी बुक सेंटर नई दिल्ली, पृ.-13
[xv] फ़िजी का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, पृ.-214
[xvi] सागरपार भारतीय संस्कृति और हिंदी, पृ.- 71
[xvii] फ़िजी का सृजनात्मक हिंदी साहित्य, पृ.-127
[xviii] वर्तमान साहित्य, मई 2006, पृ.- 33
[xix] गगनांचल, जुलाई- सितम्बर 2004, पृ.-31
[xx] गगनांचल, जुलाई- सितम्बर 2004, पृ.- 155

डॉ. बीरेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर
आर्यभट्ट कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय)
नई दिल्ली- 110021
email- birendrasahi@gmail.com

Copyright @ 2020 Authors